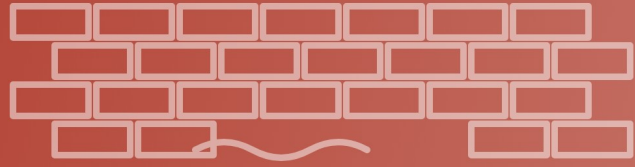


लेख 7 • इकाई VII

ठोस और परिसंकटमय अपशिष्ट प्रबंधन



मोहनजोदड़ो की नालियाँ: हज़ारों साल पुराना स्वच्छता मॉडल

साढ़े चार हज़ार वर्ष पहले सिंधु सभ्यता के नगरों में हर घर का गंदा पानी ढकी हुई नालियों से बाहर जाता था। आज भारत के शहरों का लगभग तीन-चौथाई सीवेज बिना शोधन के बह जाता है। उस पुराने मॉडल में ऐसा क्या था जो हम भूल गए?

लेखक: सुश्री लवलीन सिंह | निदेशक, वाटरपीस इंस्टीट्यूट, गाजियाबाद

सारांश

लगभग साढ़े चार हज़ार वर्ष पहले सिंधु सभ्यता के नगरों में हर घर का स्नानघर ढकी हुई सड़क-नालियों से जुड़ा था, जिनमें सफ़ाई के लिए हटाने योग्य पट्टियाँ और ठोस कचरा रोकने के लिए गाद-कुंड बने थे। यह व्यवस्था उन्हीं सिद्धांतों पर टिकी थी जो आज की स्वच्छता इंजीनियरी के आधार हैं: हर घर का जुड़ाव, ढकाव, ढाल, ठोस पदार्थ का अलगाव और नियमित रखरखाव। आज भारत ने शौचालय निर्माण में बड़ी सफलता पाई है, पर देश में बनने वाले सीवेज का लगभग 28 प्रतिशत ही वास्तव में शोधित होता है और ठोस कचरे का लगभग आधा। लेख इस पुराने मॉडल को आधुनिक शोधन विज्ञान, स्वच्छ भारत मिशन और सतत विकास लक्ष्य 6 से जोड़ता है।

मुख्य शब्द: सिंधु सभ्यता, मोहनजोदड़ो, धोलावीरा, लोथल, जल-निकासी, अपशिष्ट जल शोधन, स्वच्छ भारत मिशन, SDG 6

सतत विकास लक्ष्य: SDG 6 (स्वच्छ जल और स्वच्छता) • SDG 11 (टिकाऊ शहर)

ईंटों के नीचे दबा एक नगर-नियोजन

1920 के दशक में जब पुरातत्वविदों ने सिंध में मोहनजोदड़ो और पंजाब में हड़प्पा के टीले खोदे, तो उन्हें महल या विशाल मकबरे नहीं मिले। उन्हें जो चीज़ सबसे अधिक चकित करने वाली लगी, वह थी **नालियाँ**।

सीधी, एक-दूसरे को समकोण पर काटती सड़कें। हर सड़क के किनारे पकी ईंटों की नाली। हर घर से निकलकर उस नाली में मिलती छोटी नाली। और यह सब किसी एक मोहल्ले में नहीं, पूरे नगर में, एक ही योजना के अनुसार।

यह सभ्यता, जिसे सिंधु घाटी या हड़प्पा सभ्यता कहते हैं (कुछ विद्वान सिंधु-सरस्वती सभ्यता भी कहते हैं), लगभग 2600 से 1900 ईसा पूर्व के बीच अपने शहरी रूप में फली-फूली। इसके प्रमुख नगर आज के पाकिस्तान और भारत के गुजरात, हरियाणा, राजस्थान और पंजाब में फैले थे।

व्यवस्था कैसी थी?

पुरातत्वविद माइकल यानसन ने मोहनजोदड़ो की जल-आपूर्ति और निकासी का विस्तृत अध्ययन किया है। खुदाई और ऐसे अध्ययनों से जो तस्वीर बनती है, उसके मुख्य अंग ये हैं।

स्नानघर। अधिकांश घरों में पकी ईंटों का एक ढलवाँ चबूतरा था, जिसकी ईंटें इतनी सटाकर लगाई गई थीं कि पानी नीचे न रिसे। पानी एक कोने से निकलकर दीवार के पार चला जाता था।

शौचालय। कई घरों में स्नानघर के पास शौच की व्यवस्था मिली है, जिसका निकास या तो सड़क की नाली में था या घर के बाहर रखे बड़े मिट्टी के घड़े या सोखता गड्ढे में।

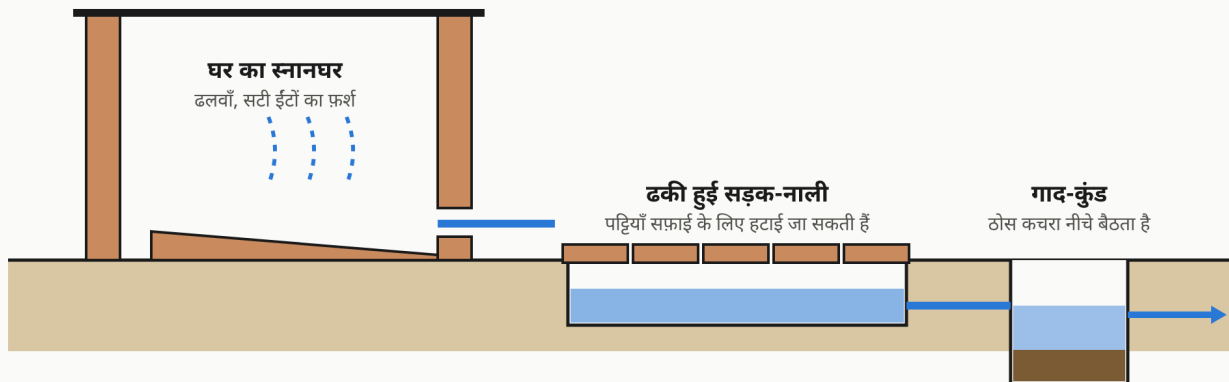
ढकी हुई सड़क-नालियाँ। सड़क किनारे की नालियाँ ईंटों या पत्थर की पट्टियों से ढकी थीं। ये पट्टियाँ **हटाई जा सकती थीं**, ताकि नाली की सफ़ाई हो सके।

गाद-कुंड। नालियों में जगह-जगह छोटे गड्ढे बने थे। पानी की रफ़्तार वहाँ धीमी पड़ती, ठोस कचरा नीचे बैठ जाता और ऊपर का पानी आगे बढ़ जाता। इन कुंडों को समय-समय पर खाली किया जाता रहा होगा।

कुएँ। यानसन का अनुमान है कि अकेले मोहनजोदड़ो में लगभग 700 कुएँ थे, यानी लगभग हर तीसरे घर के लिए एक। पीने के पानी का स्रोत और गंदे पानी का निकास अलग-अलग रखे गए थे।

महास्नानागार। नगर के ऊँचे भाग में लगभग 12 मीटर लंबा, 7 मीटर चौड़ा और 2.4 मीटर गहरा एक कुंड है। इसकी ईंटों के पीछे प्राकृतिक डामर (बिटुमेन) की परत है ताकि पानी न रिसे, और एक कोने में पानी निकालने की बड़ी नाली है।

हड़प्पा-कालीन जल-निकासी: घर से नगर के बाहर तक



रेखाचित्र: IKS JOURNAL (योजनाबद्ध; पैमाने पर नहीं)

चित्र 1: हड़प्पा-कालीन जल-निकासी का रेखाचित्र: घर का स्नानघर, ढकी हुई सड़क-नाली और गाद-कुंड।

इसी तरह गुजरात के **लोथल** में घरों की नालियाँ और सोखता घड़े मिले हैं। कच्छ के **धोलावीरा** में, जहाँ न कोई बारहमासी नदी है न पर्याप्त भूजल, नगर के चारों ओर पत्थर काटकर बनाए गए जलाशयों की शृंखला है जिनमें बरसाती नालों का पानी मोड़कर भरा जाता था। नगर के भीतर बारिश का पानी इकट्ठा करने के लिए अलग नालियाँ थीं। धोलावीरा की खुदाई भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के आर.एस. बिष्ट के नेतृत्व में 1990 से 2005 के बीच हुई, और जुलाई 2021 में यह यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में शामिल हुआ।

कूड़ेदान, ईंटें और बाट: मानकीकरण की संस्कृति

नालियाँ इस सभ्यता की एक बड़ी आदत का हिस्सा थीं: हर चीज़ को **तय नाप** में बनाना।

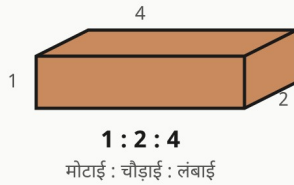
हड़प्पा की ईंटें सैकड़ों किलोमीटर दूर बसे नगरों में भी एक ही अनुपात की मिलती हैं: मोटाई, चौड़ाई और लंबाई का अनुपात 1:2:4। इस अनुपात की ईंटें आड़ी-खड़ी जोड़ने पर मज़बूत दीवार बनाती हैं, और एक जैसी होने के कारण नाली की ढकने वाली पट्टी किसी भी जगह ठीक बैठ जाती है।

तौल के बाट भी मानक थे। चर्ट पत्थर के घनाकार बाट 1, 2, 4, 8, 16, 32 और 64 के अनुपात में मिले हैं। लंबाई नापने के पैमाने भी पाए गए हैं।

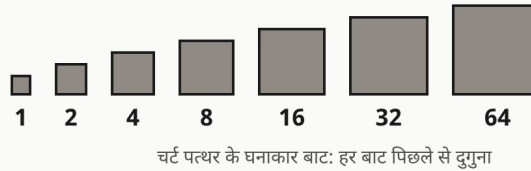
इस लेख की इकाई 'ठोस अपशिष्ट' की है, इसलिए एक और खोज उल्लेखनीय है। मोहनजोदड़ो की गलियों में जगह-जगह ईंटों से बने **कूड़ा-पात्र** मिले हैं, जिनमें घरों का कचरा डाला जाता था। यानी तरल कचरे के लिए नाली और ठोस कचरे के लिए अलग पात्र: कचरे को स्रोत पर अलग करने का यह विचार 2016 के ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियमों का पहला सूत्र है।

मानक ईट, मानक बाट

सैकड़ों किलोमीटर दूर के नगरों में भी एक ही नाप



रेखाचित्र: IKS JOURNAL (आकार प्रतीकात्मक)



चित्र 2: मानक ईट और मानक बाट: हड़प्पा की नाप-तौल।

तरल कचरे के लिए नाली और ठोस कचरे के लिए अलग पात्र: स्रोत पर अलगाव का विचार यहाँ साढ़े चार हज़ार वर्ष पुराना है।

धोलावीरा: जहाँ पानी ही नगर-योजना था

मोहनजोदड़ो सिंधु नदी के किनारे था, जहाँ पानी की कमी नहीं थी और चुनौती उसे बाहर निकालने की थी। कच्छ के रण के बीच खदिर नाम के टापू पर बसे धोलावीरा की चुनौती ठीक उलटी थी। यहाँ न कोई बारहमासी नदी है, न मीठा भूजल; और बारिश साल में कुछ ही दिन होती है।

नगर के उत्तर और दक्षिण में दो बरसाती नाले बहते हैं, जिन्हें आज मनसर और मनहर कहा जाता है। धोलावीरा के निर्माताओं ने इन पर पत्थर के बाँध बनाकर पानी को नगर की दीवार के साथ-साथ बने जलाशयों की शृंखला में मोड़ा। ज़मीन की ढाल का उपयोग इस तरह किया गया कि एक जलाशय भरने पर

पानी अगले में चला जाए। कुछ जलाशय ठोस चट्टान काटकर बनाए गए हैं और उनमें उतरने के लिए सीढ़ियाँ हैं।

नगर के ऊँचे भाग, यानी दुर्ग, में गिरने वाला बरसाती पानी भी व्यर्थ नहीं जाता था। पत्थर की ढकी हुई नालियाँ उसे इकट्ठा करके भीतरी कुंडों तक ले जाती थीं। ये नालियाँ इतनी ऊँची हैं कि आदमी भीतर चलकर उन्हें साफ़ कर सकता है।

पुरातत्वविद आर.एस. बिष्ट का आकलन है कि नगर के घिरे हुए क्षेत्र का एक बड़ा हिस्सा केवल जल-संग्रह को दिया गया था। धोलावीरा हमें यह सिखाता है कि हड़प्पा के लोग हर जगह एक ही साँचा नहीं लगाते थे। जहाँ पानी अधिक था वहाँ निकासी, और जहाँ कम था वहाँ संचय: योजना स्थान के अनुसार बदली।

इस मॉडल के पाँच सिद्धांत

इंजीनियरी की भाषा में देखें तो हड़प्पा के नगर-निर्माता पाँच सिद्धांतों पर चले, और ये सभी आज की स्वच्छता इंजीनियरी की पाठ्यपुस्तकों में मिलते हैं।

हड़प्पा की जल-निकासी के पाँच सिद्धांत

ऊपर: हड़प्पा की व्यवस्था; नीचे: आधुनिक सिद्धांत

 हर घर जुड़ा हर घर का निकास सार्वजनिक नाली से सार्वभौमिक कनेक्शन	 ढकी नालियाँ ईंट या पत्थर की पट्टियाँ मल-जल से संपर्क रोकना	 ढाल ढाल देकर बनाई गई नालियाँ गुरुत्व-प्रवाह, बिना पंप	 गाद-कुंड ठोस कचरा नीचे बैठता है प्राथमिक शोधन	 रखरखाव हटाने योग्य पट्टियाँ, मानक ईंटें नियमित सफाई और मानकीकरण
---	--	---	---	---

रेखाचित्र: IKS JOURNAL

चित्र 3: हड़प्पा की जल-निकासी के पाँच सिद्धांत, जो आज भी स्वच्छता इंजीनियरी का आधार हैं।

सबसे बड़ी बात जो इन ईंटों से पढ़ी जा सकती है, वह तकनीक नहीं, **संस्था** है। नालियाँ तभी चलती हैं जब कोई उन्हें नियमित साफ़ करे, कोई नियम बनाए कि घर की नाली कहाँ मिलेगी, और कोई देखे कि सड़क पर अतिक्रमण न हो। सैकड़ों वर्षों तक इस व्यवस्था का चलते रहना बताता है कि वहाँ कोई मज़बूत नगर-प्रशासन था।

यह परंपरा बाद के साहित्य में भी दिखती है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में नियम है कि हर घर से पर्याप्त ढाल वाली जल-निकासी होनी चाहिए, और सड़क पर कूड़ा या कीचड़ फैलाने पर जुर्माने का प्रावधान है (इस अंक का लेख 8 देखें)।

सावधानी: तीन बातें जो याद रखनी चाहिए

पहली, सिंधु सभ्यता की लिपि अब तक पढ़ी नहीं जा सकी है। इसलिए हम नहीं जानते कि वे लोग अपनी इस व्यवस्था के बारे में क्या सोचते थे, उसे क्या कहते थे, या उसके पीछे स्वास्थ्य की समझ थी, धार्मिक शुद्धता का विचार था, या दोनों। हमारा सारा ज्ञान ईंटों और खुदाई पर टिका है, ग्रंथों पर नहीं।

दूसरी, यह दुनिया की सबसे पुरानी ज्ञात शहरी स्वच्छता व्यवस्थाओं में से एक है, पर अकेली नहीं। उसी काल के मेसोपोटामिया के नगरों में भी नालियाँ मिली हैं। हड़प्पा की विशेषता उसका पैमाना और एकरूपता है।

तीसरी, इन नालियों का पानी अंत में नगर के बाहर या नदी में ही जाता था। उस समय की छोटी आबादी के लिए यह चल गया। आज के करोड़ों की आबादी वाले शहरों में केवल नाली बनाना काफ़ी नहीं; **शोधन के बिना वही पानी नदी को नाला बना देता है।**

हड़प्पा के बाद: स्वच्छता का लंबा इतिहास

लगभग 1900 ईसा पूर्व के बाद सिंधु सभ्यता के बड़े नगर धीरे-धीरे खाली हो गए और यह नगर-व्यवस्था भी उनके साथ लुप्त हो गई। क्यों? जलवायु में बदलाव, नदियों का मार्ग बदलना और व्यापार का टूटना, तीनों कारण गिनाए जाते हैं।

भारत में नगर फिर से लगभग छठी शताब्दी ईसा पूर्व में गंगा के मैदान में बसे। इस 'दूसरे नगरीकरण' के स्थलों की खुदाई में एक नई तकनीक मिलती है: **वलय-कूप**, यानी पकी मिट्टी के छल्लों को एक के ऊपर एक रखकर बनाया गया गहरा सोखा गड्ढा। तक्षशिला, हस्तिनापुर और उज्जैन जैसे स्थलों पर ऐसे कूप मिले हैं। यह सामूहिक नाली की जगह हर घर का अपना निपटान था।

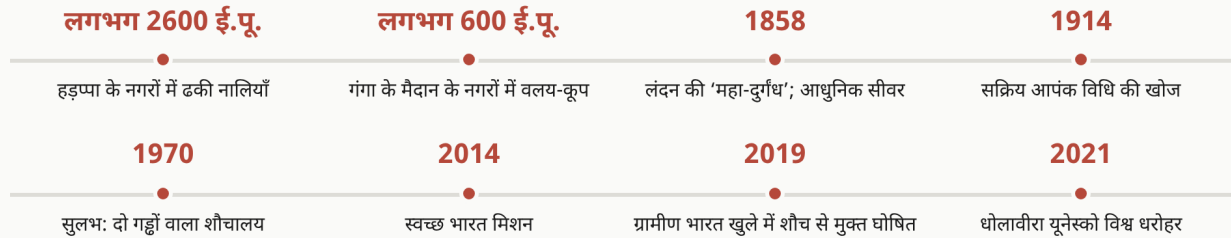
दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी यह इतिहास सीधी रेखा में नहीं चला। रोम ने छठी शताब्दी ईसा पूर्व में 'क्लोआका मैक्सिमा' नाम का विशाल नाला बनाया, पर रोम के पतन के बाद यूरोप के शहर हज़ार वर्ष तक खुली नालियों और गंदगी में जीते रहे।

आधुनिक सीवर का जन्म 1858 में लंदन की 'ग्रेट स्ट्रिक' यानी 'महा-दुर्गंध' से हुआ। उस गरमी में टेम्स नदी से ऐसी बदबू उठी कि संसद का काम रुक गया। इसके बाद इंजीनियर जोसेफ़ बैज़लजेट ने शहर के नीचे सैकड़ों किलोमीटर लंबे सीवर बिछाए। 1860 के दशक से कलकत्ता और बंबई में भी भूमिगत सीवर बनने लगे।

इस इतिहास की सीख यह है कि स्वच्छता की तकनीक खोजने से कठिन काम उसे **पीढ़ियों तक चलाए रखना** है। जिस

समाज की संस्थाएँ कमज़ोर पड़ती हैं, वहाँ नालियाँ सबसे पहले जाम होती हैं।

स्वच्छता का लंबा इतिहास



चित्र 4: स्वच्छता का इतिहास: हड़प्पा से स्वच्छ भारत तक।

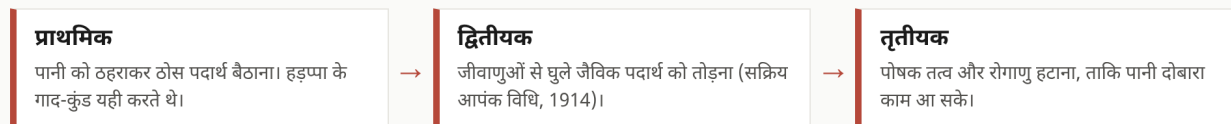
आधुनिक विज्ञान: नाली के आगे क्या?

उन्नीसवीं सदी में लंदन में हैज़े की महामारियों ने यूरोप को यह सिखाया कि मल-जल और पीने के पानी का मिलना जानलेवा है। 1854 में डॉक्टर जॉन स्नो ने लंदन के एक मोहल्ले में हैज़े के मामलों को नक्शे पर चिह्नित करके दिखाया कि सभी मरीज़ एक ही हैंडपंप का पानी पीते थे। इसके बाद दुनिया भर के शहरों में सीवर बने।

आज का अपशिष्ट जल शोधन तीन चरणों में होता है:

- **प्राथमिक:** पानी को ठहराकर ठोस पदार्थ नीचे बैठाना। यह वही काम है जो हड़प्पा के गाद-कुंड करते थे।
- **द्वितीयक:** जीवाणुओं की मदद से घुले हुए जैविक पदार्थ को तोड़ना। 1914 में इंग्लैंड में विकसित 'सक्रिय आपंक' (activated sludge) विधि इसका आधार है।
- **तृतीयक:** बचे हुए पोषक तत्व और रोगाणु हटाना, ताकि पानी दोबारा काम में लिया जा सके।

अपशिष्ट जल शोधन के तीन चरण



रेखाचित्र: IKS JOURNAL

चित्र 5: अपशिष्ट जल शोधन के तीन चरण। पहला चरण वही है जो हड़प्पा के गाद-कुंड करते थे।

शोधन कितना सफल रहा, यह 'जैव-रासायनिक ऑक्सीजन माँग' (BOD) से नापा जाता है: पानी में मौजूद गंदगी को तोड़ने के लिए जीवाणुओं को कितनी ऑक्सीजन चाहिए। जितनी अधिक BOD, उतना गंदा पानी।

आज का भारत: शौचालय बने, शोधन बाक़ी

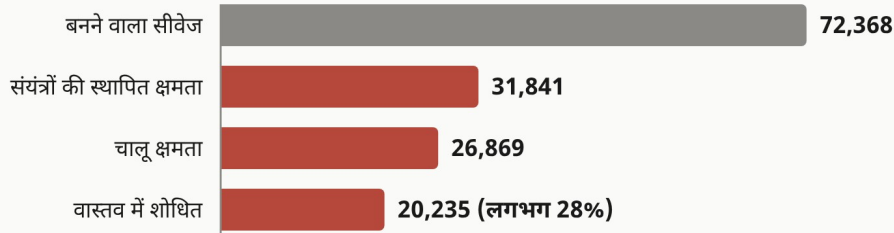
2 अक्टूबर 2014 को **स्वच्छ भारत मिशन** शुरू हुआ। पाँच वर्षों में ग्रामीण इलाकों में 10 करोड़ से अधिक घरेलू शौचालय

बने और 2 अक्टूबर 2019 को ग्रामीण भारत को खुले में शौच से मुक्त घोषित किया गया। 2024 में 'साइंटिफ़िक रिपोर्ट्स' पत्रिका में छपे एक अध्ययन ने अनुमान लगाया कि इस मिशन के बाद के वर्षों में शौचालयों के प्रसार का संबंध हर वर्ष लगभग 60 से 70 हज़ार कम शिशु मृत्यु से रहा।

पर शौचालय कहानी का पहला आधा हिस्सा है। दूसरा आधा यह है कि उससे निकला मल-जल कहाँ जाता है।

भारत में सीवेज: बनने से शोधन तक

मिलियन लीटर प्रतिदिन



स्रोत: केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, National Inventory of Sewage Treatment Plants (2021)

चित्र 6: भारत में सीवेज: बनने से शोधन तक (मिलियन लीटर प्रतिदिन)।

यानी जितना सीवेज बनता है, उसका लगभग 28 प्रतिशत ही वास्तव में साफ़ होता है। शेष नालों से होकर नदियों, झीलों और भूजल में पहुँचता है। गंगा और यमुना के प्रदूषण का सबसे बड़ा स्रोत कारखाने नहीं, शहरों का यही घरेलू सीवेज है।

मिशन का दूसरा चरण (ग्रामीण क्षेत्रों में 'ओडीएफ़ प्लस' और शहरों में 'स्वच्छ भारत मिशन-शहरी 2.0') अब ठोस और तरल कचरे के प्रबंधन पर केंद्रित है।

शौचालय के नीचे: दो गड्ढों का विज्ञान

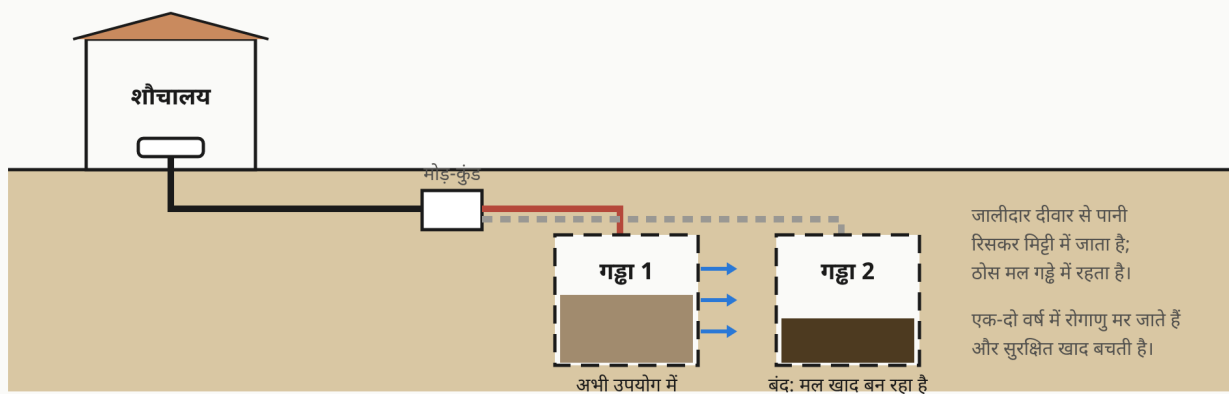
देश के अधिकांश गाँवों में सीवर लाइन नहीं है और निकट भविष्य में होगी भी नहीं। वहाँ शौचालय का मल-जल वहीं

ज़मीन में सुरक्षित रूप से निपटाना होता है। इसके लिए सबसे उपयुक्त तकनीक **दो गड्ढों वाला शौचालय** है, जिसे 1970 के दशक में बिंदेश्वर पाठक और उनकी संस्था सुलभ ने देश भर में फैलाया।

इसमें शौचालय की सीट से एक नाली निकलकर दो अलग गड्ढों की ओर जाती है, पर एक समय में केवल एक गड्ढा खुला रहता है। गड्ढों की दीवार जालीदार ईंटों की होती है। पानी रिसकर मिट्टी में चला जाता है और ठोस मल गड्ढे में रह जाता है। कुछ वर्षों में जब पहला गड्ढा भर जाए, तो नाली दूसरे गड्ढे की ओर मोड़ दी जाती है।

दो गड्ढों वाला शौचालय

न सीवर चाहिए, न टैंकर



रेखाचित्र: IKS JOURNAL (सरलीकृत)

चित्र 7: दो गड्ढों वाला शौचालय। एक गड्ढा भरने पर नाली दूसरे की ओर मोड़ दी जाती है।

बंद पड़े पहले गड्ढे में अगले एक-दो वर्षों में रोगाणु मर जाते हैं और मल सूखकर भुरभुरी, गंधहीन खाद बन जाता है, जिसे हाथ

से निकालना सुरक्षित है। इस तरह न सीवर चाहिए, न टैंकर, और न किसी मनुष्य को कच्चा मैला छूना पड़ता है।

शहरों के सेप्टिक टैंक इससे अलग हैं। उनका गाढ़ा मल-गाद हर कुछ वर्षों में मशीन से निकालकर शोधन संयंत्र तक ले जाना होता है। जहाँ यह नहीं होता, वहाँ टैंक इसे नाले या खेत में उड़ेल देते हैं, और शौचालय बनने के बावजूद प्रदूषण बना रहता है।

एक और पक्ष है जिस पर बात किए बिना यह लेख अधूरा रहेगा। नालियों और सेप्टिक टैंकों की सफ़ाई आज भी देश में बहुत जगह मनुष्य हाथ से करते हैं और हर वर्ष सफ़ाईकर्मी सीवर में

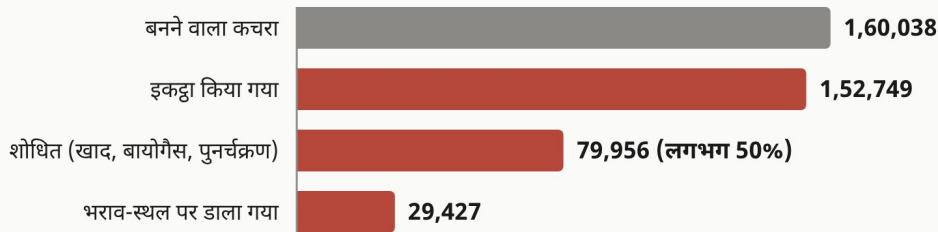
दम घुटने से मरते हैं। 2013 के क़ानून ने हाथ से मैला उठाने की प्रथा पर रोक लगाई और 2023 में मशीनों से सफ़ाई को बढ़ावा देने के लिए 'नमस्ते' योजना शुरू हुई। स्वच्छता का कोई भी मॉडल, प्राचीन हो या आधुनिक, तब तक पूरा नहीं है जब तक सफ़ाई करने वाले की गरिमा और सुरक्षा उसमें शामिल न हो।

ठोस कचरा: स्वच्छता का दूसरा पहिना

नाली तरल कचरे का रास्ता है। ठोस कचरे की कहानी अलग है, और आज वह उतनी ही बड़ी चुनौती है।

नगरीय ठोस कचरा: बनने से निपटान तक

टन प्रतिदिन, 2020-21



स्रोत: केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, वार्षिक रिपोर्ट 2020-21

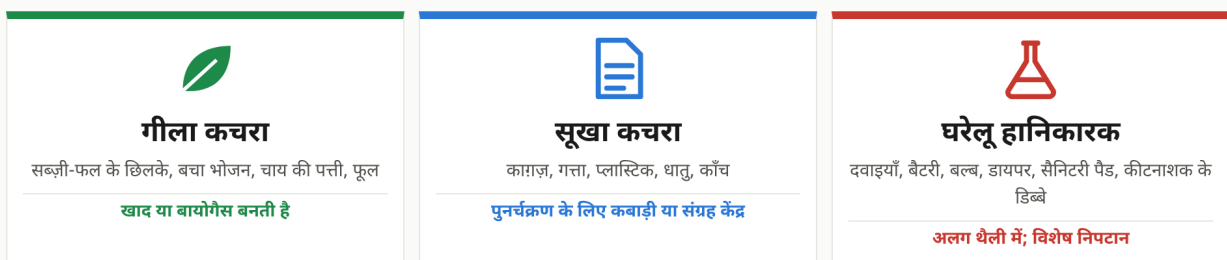
चित्र 8: भारत के शहरों का ठोस कचरा: बनने से निपटान तक (टन प्रतिदिन, 2020-21)।

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की 2020-21 की रिपोर्ट के अनुसार देश में रोज़ लगभग 1.6 लाख टन नगरीय ठोस कचरा बनता है। इसका लगभग 95 प्रतिशत इकट्ठा कर लिया जाता है, पर शोधन (खाद, बायोगैस या पुनर्चक्रण) केवल लगभग आधे

का होता है। शेष कचरा भराव-स्थलों पर पहुँचता है या हिसाब से बाहर रह जाता है। दिल्ली के गाज़ीपुर और मुंबई के देवनार जैसे 'कचरे के पहाड़' इसी का नतीजा हैं।

घर पर कचरे के तीन हिस्से

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016



स्रोत: ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016

चित्र 9: घर पर कचरे के तीन हिस्से।

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016 का पहला सूत्र है घर पर ही कचरे को तीन हिस्सों में बाँटना: गीला (रसोई का, जिससे खाद बनती है), सूखा (कागज़, प्लास्टिक, धातु, जो दोबारा काम आते हैं) और घरेलू हानिकारक (दवाइयाँ, बैटरी, डायपर)।

इंदौर, जो स्वच्छ सर्वेक्षण में लगातार कई वर्षों तक देश का सबसे स्वच्छ शहर चुना गया, की सफलता इसी एक आदत पर टिकी है: हर घर से अलग-अलग किया हुआ कचरा।

प्रकृति का शोधन संयंत्र: पूर्वी कोलकाता की आर्द्रभूमि

कोलकाता के पूर्वी छोर पर लगभग 12,500 हेक्टेयर में फैली आर्द्रभूमि एक अनोखा उदाहरण है। शहर का सीवेज नहरों से होकर यहाँ के उथले तालाबों ('भेरी') में आता है। धूप, शैवाल और जीवाणु मिलकर उसे साफ़ करते हैं, उन्हीं पोषक तत्वों पर

मछलियाँ पलती हैं, और निथरे पानी से धान और सब्ज़ियाँ उगती हैं।

यह व्यवस्था लगभग सौ वर्ष पहले स्थानीय मछुआरों और किसानों ने विकसित की थी। इसे दुनिया के सामने लाने का श्रेय इंजीनियर और पारिस्थितिकी विज्ञानी ध्रुवज्योति घोष को जाता है। 2002 में यह रामसर स्थल घोषित हुई। यह दिखाती है कि कचरा, सही ढंग से सँभाला जाए, तो संसाधन है।

क्या आप जानते हैं?

- 'मोहनजोदड़ो' का अर्थ सिंधी भाषा में 'मुर्दों का टीला' है; यह 1980 से यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में है।
- हरियाणा का राखीगढ़ी भारत में स्थित सबसे बड़े हड़प्पा-कालीन स्थलों में है।
- गुजरात के लोथल में ईंटों का बना एक विशाल आयताकार कुंड मिला है, जिसे अधिकांश पुरातत्वविद गोदी (डॉकयार्ड) मानते हैं।
- संयुक्त राष्ट्र हर वर्ष 19 नवंबर को विश्व शौचालय दिवस मनाता है।
- 1914 में मैनचेस्टर में खोजी गई 'सक्रिय आपंक' विधि आज भी दुनिया के अधिकांश सीवेज संयंत्रों का आधार है।

कचरे के सात नियम: एक सारणी

इस लेख की इकाई 'ठोस और परिसंकटमय अपशिष्ट प्रबंधन' है। भारत में हर प्रकार के कचरे के लिए पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के अंतर्गत अलग नियम बने हैं।

कचरे का प्रकार	नियम	मुख्य बात
घरों और बाज़ारों का ठोस कचरा	ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016	स्रोत पर तीन हिस्सों में अलगाव; थोक उत्पादक अपना गीला कचरा स्वयं निपटाएँ
प्लास्टिक	प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016	निर्माता की विस्तारित ज़िम्मेदारी; 2022 से चिह्नित एकल-उपयोग प्लास्टिक पर रोक
इलेक्ट्रॉनिक कचरा	ई-अपशिष्ट (प्रबंधन) नियम, 2022	निर्माता के लिए पुनर्चक्रण के वार्षिक लक्ष्य; सौर पैनल भी शामिल
अस्पतालों का कचरा	जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016	रंगीन थैलों में अलगाव; साझा शोधन सुविधा
निर्माण का मलबा	निर्माण और विध्वंस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016	मलबा सड़क या नाले में डालना वर्जित; पुनर्चक्रण संयंत्र
खतरनाक औद्योगिक कचरा	परिसंकटमय अपशिष्ट नियम, 2016	उत्पादन से निपटान तक का लेखा; सीमापार आवाजाही पर नियंत्रण
बैटरियाँ	बैटरी अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2022	निर्माता द्वारा पुरानी बैटरी की वापसी और पुनर्चक्रण

लक्ष्य और अधिकार

स्वच्छता पर कोई अलग अंतरराष्ट्रीय संधि नहीं है, पर जुलाई 2010 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने प्रस्ताव 64/292 से सुरक्षित पेयजल और स्वच्छता को **मानव अधिकार** माना।

सतत विकास लक्ष्यों में **उप-लक्ष्य 6.2** कहता है कि 2030 तक सबको पर्याप्त स्वच्छता मिले और खुले में शौच समाप्त हो, और **उप-लक्ष्य 6.3** कहता है कि बिना शोधन के बहाए जाने वाले गंदे पानी का अनुपात आधा किया जाए। विश्व स्वास्थ्य संगठन और यूनिसेफ़ की 2025 की रिपोर्ट के अनुसार 2024 में भी

दुनिया के लगभग 340 करोड़ लोगों के पास सुरक्षित रूप से प्रबंधित स्वच्छता सुविधा नहीं थी।

पाठकों के चार प्रश्न

क्या हड़प्पा के शौचालय आज जैसे 'फ़्लश' वाले थे? नहीं। उनमें कोई यांत्रिक व्यवस्था नहीं थी। घड़े से पानी डालकर मल को नाली या सोखता घड़े में बहाया जाता था, जैसे आज भी देश के अधिकांश घरों में होता है। विशेष बात शौचालय नहीं, उसके आगे की व्यवस्था थी: एक ढकी हुई नाली जो उस पानी को घर और गली से दूर ले जाती थी।

सीवर और सेप्टिक टैंक में क्या अंतर है? सीवर पाइपों का वह जाल है जो पूरे मोहल्ले का मल-जल एक शोधन संयंत्र तक ले जाता है। सेप्टिक टैंक घर के अहाते में बना बंद कुंड है, जिसमें ठोस मल बैठ जाता है और ऊपर का पानी सोखता गड्ढे में जाता

है। टैंक की गाद हर दो-तीन वर्ष में मशीन से निकलवानी ज़रूरी है; ऐसा न करने पर वह नाली और भूजल को दूषित करता है।

घर के गीले कचरे से खाद कैसे बनाएँ? तली में छेद वाला एक मिट्टी का मटका या बाल्टी लें। नीचे सूखे पत्तों की परत बिछाएँ। रोज़ का रसोई का कचरा (सब्ज़ी-फल के छिलके, चाय की पत्ती) डालें और हर बार ऊपर से मुट्ठी भर सूखे पत्ते या मिट्टी डाल दें। सप्ताह में एक बार लकड़ी से उलट-पलट करें। छह से आठ सप्ताह में भुरभुरी, मिट्टी जैसी गंध वाली खाद तैयार हो जाती है। पका भोजन, तेल और हड्डियाँ शुरू में न डालें।

क्या नाली का शोधित पानी दोबारा काम आ सकता है? हाँ, और यही भविष्य है। सिंगापुर अपने सीवेज को इतना शोधित करता है कि वह पीने लायक हो जाता है। भारत में नागपुर और सूरत जैसे शहर शोधित सीवेज बिजली घरों और कारखानों को बेचते हैं, जिससे नदी का मीठा पानी बचता है और नगर निगम को आय होती है।

कक्षा में चर्चा के लिए

- हड़प्पा की नालियाँ सैकड़ों वर्ष चलीं, जबकि आज की नालियाँ हर बरसात में जाम हो जाती हैं। अंतर तकनीक का है या व्यवस्था का?
- आपके घर से एक दिन में कितना गीला, सूखा और हानिकारक कचरा निकलता है? एक सप्ताह तौलकर देखिए।
- शौचालय बन जाना काफ़ी क्यों नहीं है? आपके गाँव या मोहल्ले का मल-जल अंत में कहाँ जाता है?
- सफ़ाईकर्मियों की सुरक्षा और सम्मान के लिए तीन ठोस उपाय सुझाइए।

निष्कर्ष

मोहनजोदड़ो की नालियाँ हमें कोई खोई हुई तकनीक नहीं सिखाती; ढाल, ढक्कन और गाद-कुंड आज हर इंजीनियर जानता है। वे हमें यह सिखाती हैं कि **स्वच्छता पूरे नगर की**

साझा व्यवस्था है, जिसमें हर घर जुड़ा हो और जिसका रखरखाव पीढ़ियों तक चलता रहे। साढ़े चार हज़ार वर्ष पहले यह इस भूमि पर संभव था। आज की चुनौती उस पुराने अनुशासन को आधुनिक शोधन तकनीक और सफ़ाईकर्मियों की गरिमा के साथ जोड़ने की है।

मुख्य बातें: याद रखने के लिए

- मोहनजोदड़ो (लगभग 2600-1900 ईसा पूर्व) में घरों के स्नानघर ढकी हुई सड़क-नालियों से जुड़े थे, जिनमें सफ़ाई के लिए हटाई जा सकने वाली पट्टियाँ और गाद-कुंड थे।
- कच्छ का धोलावीरा, जो अपने जलाशयों के लिए प्रसिद्ध है, 2021 में यूनेस्को की विश्व धरोहर सूची में आया।
- केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार देश में रोज़ 72,368 मिलियन लीटर सीवेज बनता है, जिसमें से लगभग 28% का ही वास्तव में शोधन होता है।
- 2 अक्टूबर 2019 को ग्रामीण भारत खुले में शौच से मुक्त घोषित हुआ; अब चुनौती मल-जल के सुरक्षित निपटान की है।

अभ्यास प्रश्न

1. हड़प्पा की ईंटों की मोटाई, चौड़ाई और लंबाई का मानक अनुपात क्या था?

(क) 1:1:2 (ख) 1:2:4 (ग) 1:3:9 (घ) 2:3:5

2. धोलावीरा किस राज्य में है और किस वर्ष विश्व धरोहर बना?

(क) गुजरात, 2021 (ख) राजस्थान, 2014 (ग) हरियाणा, 2019 (घ) पंजाब, 2010

3. अपशिष्ट जल शोधन का कौन-सा चरण ठोस पदार्थों को बैठाकर अलग करता है?

(क) प्राथमिक (ख) द्वितीयक (ग) तृतीयक (घ) क्लोरीनीकरण

4. BOD क्या नापता है?

(क) पानी का तापमान (ख) गंदगी तोड़ने के लिए ज़रूरी ऑक्सीजन (ग) पानी का खारापन (घ) घुले ठोस पदार्थ

5. सतत विकास का कौन-सा उप-लक्ष्य खुले में शौच समाप्त करने की बात करता है?

(क) 3.9 (ख) 6.2 (ग) 11.6 (घ) 13.1

उत्तर: 1 (ख) • 2 (क) • 3 (क) • 4 (ख) • 5 (ख)

संदर्भ

1. Marshall, J. (ed.) (1931). Mohenjo-daro and the Indus Civilization, 3 vols. Arthur Probsthain, London.
2. Jansen, M. (1989). Water supply and sewage disposal at Mohenjo-Daro. World Archaeology 21(2): 177-192.
3. Kenoyer, J.M. (1998). Ancient Cities of the Indus Valley Civilization. Oxford University Press, Karachi.
4. Possehl, G.L. (2002). The Indus Civilization: A Contemporary Perspective. AltaMira Press, Walnut Creek.
5. UNESCO World Heritage Centre (2021). Dholavira: a Harappan City. विश्व धरोहर सूची, क्रमांक 1645।
6. Central Pollution Control Board (2021). National Inventory of Sewage Treatment Plants. CPCB, Delhi.
7. Chakrabarti, S. et al. (2024). Toilet construction under the Swachh Bharat Mission and infant mortality in India. Scientific Reports, खंड 14.
8. WHO and UNICEF (2025). Progress on Household Drinking Water, Sanitation and Hygiene 2000-2024. Joint Monitoring Programme, Geneva.
9. United Nations General Assembly (2010). The human right to water and sanitation. Resolution A/RES/64/292.
10. Central Pollution Control Board (2021). Annual Report on Implementation of Solid Waste Management Rules, 2016 (2020-21). CPCB, Delhi.
11. Ghosh, D. (2005). Ecology and Traditional Wetland Practice: Lessons from Wastewater Utilisation in the East Calcutta Wetlands. Worldview, Kolkata.